© 2017 IJSRST | Volume 3, Issue 7, September-October-2017
Print ISSN: 2395-6011 | Online ISSN: 2395-602X | Page No 1397-1400

वैदिक मनोविज्ञान आधुनिक सामाजिक चिंतन के परिपेक्ष्य में

डॉ अनिता सेनगुप्ता
एसोसिएट प्रोफेसर संस्कृत–विभाग
ईश्वर सरन डिग्री कालेज,
इलाहाबाद विश्वविद्यालय, इलाहाबाद।

शोध आलेख सार– मानव–मन एवं मानव व्यवहार के सभी पक्षों का अध्ययन मनोविज्ञान का विषय है। मनोविज्ञान का मुख्य उद्देश्य चित्त को विकसित करना एवं विवेक प्राप्ति की योग्यता उत्पन्न करना रहा है। इस तथ्य से हम सभी अवगत हैं कि मानव में मन की महत्ता सर्वोपरि है। वही समस्त धर्मों का आधार है। निःसन्देह वैदिक मनोविज्ञान सामाजिक जीवन के पूर्ण उत्कर्ष के लिये दिशा–निर्देश करता है और साथ ही भारतीय मनोविज्ञान क आधारशिला प्रस्तुत करता है।

मुख्य शब्द– मनोविज्ञान, सामाजिक, परिवार, समाज, राष्ट्र, सौहार्द,।

शिवेन वचसा त्वा गिरिशाच्छा वदामसि।
यथा नः सर्वमिज्जगद्यक्ष्मः सुमना असत्।यजु016/11।

हे समस्त प्राणियों की वाणियों के ज्ञाता परमेश्वर मंगल वचनों द्वारा हम आपसे बड़ी नम्रता से प्रार्थना करते हैं कि आप ऐसी कृपा कीजिए , जिससे सारा जगत् निरोग एवं शुद्ध मन वाला हो। ताकि स्वस्थ और सुन्दर समाज का निर्माण हो सके।

इस मानव–मन एवं मानव व्यवहार के सभी पक्षों का अध्ययन मनोविज्ञान का विषय है, अतएव इसके अन्तर्गत मुख्यरूप से मन एवं मानसिक प्रक्रियाओं का विश्लेषण किया जाता है।[1] मनोविज्ञान का मुख्य उद्देश्य चित्त को विकसित करना एवं विवेक प्राप्ति की योग्यता उत्पन्न करना रहा है। इस तथ्य से हम सभी अवगत हैं कि मानव में मन की महत्ता सर्वोपरि है। वही समस्त धर्मों का आधार है। उसके विना एकाग्रता के तो कोई भी कर्म सम्भव ही नहीं है चाहे वह छोटा हो या बड़ा।[2]

''येन कर्माण्यपसो मनीषिणो यज्ञे कृण्वन्ति विदथेषु धीराः।''
''यस्मान्न ऋते किञ्च न कर्म क्रियते।''

मन की विमुखता कर्मों की निष्फलता का हेतु है। पराजय के लिये शत्रु सेना के चित्त के विचलित होने[3] और कार्य सिद्धि हेतु चित्त या मन के नियन्त्रण में रहने[4] की कामनाओं का यही औचित्य है। मन मनुष्य की पाप में प्रवृत्ति का कारण भी है। पाप इन्द्रिय, वाणी और मन द्वारा किये जाते हैं– यच्चक्षुषा मनसा यच्च वाचो पारिम।[5] आज समाज में व्याप्त भ्रष्टाचार, आतंकवादादि, समस्त कलुषित व्यापारों का कारण मन का कलुषित होना है। परिवार, समाज एवं राष्ट्र में सौहार्द, सद्भावना और समभावना के लिये मन और हृदय की समानता स्पृहणीय है–इसलिये ऋषि कहते हैं।

समानी वः आकूतिः समाना हृदयानि वः।
समानमस्तु वः मनः यथा वः सुसहासति।।[6]

आकूतिः मन में उत्पन्न होने वाले संकल्प , इच्छा या कामना का एक समान हो। सामूहिक शान्ति के लिये समचित्तता को आवश्यक बताया गया है इस प्रकार वैदिक चिन्तन व्यक्ति के व्यवहारिक मनोविज्ञान का एक पक्ष उपन्यस्त करता है।

© 2017 IJSRST | Volume 3, Issue 7, September-October-2017
Print ISSN: 2395-6011 | Online ISSN: 2395-602X | Page No 1397-1400

बुद्धि मन का धर्म है वस्तुतः मन संकल्पमुखेन बुद्धि के साथ तथा विकल्पमुखेन इन्द्रियों के साथ संलग्न होता है। उपनिषदों में प्रचलित 'रथरूपक' की प्रकल्पना में आत्मा को रथी, बुद्धि को सारथि, मन को लगाम एवं इन्द्रियों को घोड़े कहा गया है–

आत्मानं रथिनं विद्धि शरीरें रथमेव तु।
बुद्धिं तु सारथिं विद्धि मनः प्रग्रह्यमेव च।।
इन्द्रियाणि हयानाहुर्विषयांस्तेषु गोचरम्।।[7]

मन रूपी लगाम के द्वारा विषय–चिन्तन में संलग्न इन्द्रियरूपी घोड़े को वश में करके करणीय–अकरणीय का निर्णय करने में समर्थ बुद्धि के द्वारा ही मनुष्य अपने लक्ष्य को प्राप्त कर पाता है–

विज्ञानसारथिर्यस्तु मनः प्रग्रह्वान्नरः।
सोऽध्वनः परमाप्नोति तद्विष्णोः परमं पदम्।।[8]

व्यक्ति के नाश का एकमात्र कारण बुद्धि का नाश है–

स्मृतिनाशाद् बुद्धिनाशो बुद्धिनाशात् प्रणश्यति।[9]

पुराणों में बुद्धि को नष्ट करने वाले 12 तत्त्वों का उल्लेख प्राप्त होता है– शोक, क्रोध, लोभ, मोह, काम, ईर्ष्या, अभिमान, कृपा, जुगुप्सा, तथा असूयादि ।

शोकः क्रोधः लोभश्च कामो मोह–.....।
ईर्ष्या मनोविचिकित्सा कृपाऽसूया जुगुप्सता।।[10]

परमात्मा[11] तथा आद्याशक्ति[12] का स्वरूप बुद्धि ही है। अचेतन प्रकृति महद् ब्रह्म स्वरूप है।[13] सांख्य दर्शन में इसी महत् तत्त्व को बुद्धि कहा गया है।

मूलप्रवृत्तियों में निहित सामान्य मनोविज्ञान–

प्रायः प्रत्येक प्राणी में कुछ मनोवृत्तियाँ ऐसी होती हैं, जो स्वाभाविक रूप से पायी जाती हैं, इसलिये इसको मूलप्रवृत्तियाँ कहते हैं मानवीय व्यवहार का एक बड़ा भाग इन मूलप्रवृत्तियों का ही फल होता है। प्रसिद्ध मनोवैज्ञानिक मैकडूनल के अनुसार युयुत्सा , काम, अधीनता, संग्रह, सृजन जिज्ञासा आदि कुछ मुख मूलप्रवृत्तियाँ हैं। ये मूल प्रवृत्तियाँ किसी पदार्थ , स्थिति या घटना के प्रति एक विशेष प्रकार का संवेगात्मकानुभव जागृत करती है। संवेग विभिन्न प्रकार के मूलप्रवृत्तियों की उत्तेजना से ही उत्पन्न होते हैं। अतः मूल प्रवृत्ति का भावात्मक पक्ष है।[14]

वैदिक संहिताओं में मानव की भावात्मक मानसिक अवस्था का वैज्ञानिक दृष्टि से विश्लेषण भले ही न किया गया हो, किन्तु इनसे कई प्रकृति प्रदत्त मनोवृत्तियों एवं संवेगों के उद्भव एवं प्रभाव के समबन्ध में वैदिक विचारों का आकलन अवश्य ही किया जा सकता है।

काम–मनोवृत्ति– मूल प्रवृत्तियों में काम प्रमुख है। वस्तुतः प्रत्येक प्रवृत्ति राग के कारण ही होती है और राग का ही दूसरा नाम है काम। काम से ही वासनाओं की उत्पत्ति होती है । प्रजापति के मन में सर्वप्रथम सिसृक्षा रूप काम ही उत्पन्न हुआ था– वह काम जो मन का प्रथम बीज है।[15] काम बहुत बलवान और गतिशील[16] और अन्तहीन भी है।[17]

काम मनोवृत्ति के मूल संवेग– प्रेम, क्रोध एवं भय काम मनोवृत्ति के मूल संवेग हैं। इनमें से प्रेम भिन्न–भिन्न रूपों में मानव–मन को आक्रान्त करता है। अथर्व0 के प्रीतिसंजननम्[18] सूक्त के अनुसार मनुष्य के सिर एवं हृदय प्रेम से उत्तेजित होते हैं। राष्ट्रीय भावना का आधार प्रेम ही है। यही समचित्तता तथा सौमनस्य का आधार है।[19] पारिवारिक तथा सामाजिक सख्यभाव इसी से पल्लवित होते हैं।

क्रोध नाम संवेग युयुत्सा नामक मूलप्रवृत्ति से सम्बद्ध है। व्यक्ति के व्यवहार से इस संवेगों की उपस्थिति का ज्ञान हो जाता है। वैदिक मन्त्रों में मन्यु नाम से इसकी प्रशंसा हुई है।[20] ये मन्यु शत्रुओं को अभिभूत करने में समर्थ होने से प्रशंसनीय हैं।[21] तो ऋक् संहिता में रुद्र के क्रोध से बचने की प्रार्थना भी की गयी है।[22]

इस प्रकार वैदिक ऋषि यथावसर क्रोध के हानि एवं लाभ का संकेत दिया है।

© 2017 IJSRST | Volume 3, Issue 7, September-October-2017
Print ISSN: 2395-6011 | Online ISSN: 2395-602X | Page No 1397-1400

भय पलायनवृत्ति का संवेगात्मक अनुभव है। भय मनुष्य की मानसिक शान्ति में बाधक है इसलिये भय और आशंका से छुटकारा पाने की प्रार्थनाएं वैदिक कामनाओं में अग्रगण्य है।[23]

स्थायी मनोभावनाएं–

मनुष्य के नैतिक विकास तथा विश्व अभ्युदय की दृष्टि से स्थायीभावों तथा मनोभावनाओं को महत्त्वपूर्ण मानकर वैदिक ऋषियों ने उनके स्वरूप, निराकरण या उद्भव के सम्बन्ध में जो कतिपय उद्भावनाएं की हैं, वे उनके मनोवैज्ञानिक ज्ञान के परिचायक हैं। स्थायी मनोवृत्ति अर्जित प्रवृत्तियाँ हैं, जो बनाई जाती हैं। मनोवृत्ति और वस्तु का सम्बन्ध होने पर मन में किसी वस्तु के प्रति एक विशेष भाव उत्पन्न होने लगती है।, बार –बार के अनुभवों के कारण ये भावनाएं स्थायीरूप धारण कर लेती हैं, तब इन्हें स्थायीभाव कहते हैं। स्थायी भाव अवचेतन मन में अव्यक्तावस्था में विद्यमान रहते हैं। अनुकूल स्थिति मिलते ही ये मन को प्रभावित करते हैं।[24]

ईर्ष्या, द्वेष, घृणा, कृपणता , तृष्णा, उत्साह स्थायीभाव मनुष्य अपनी शक्ति से बनाता है। ईर्ष्या मानवीय चेतना के पतन का कारण है। अथर्व0 में ईर्ष्या निवारण एक संपूर्ण सूक्त आया है।[25] इसी प्रकार अथर्व0 में अराति अर्थात् कृपणता नाशन एक सूक्त आया है। जिसमें इन मनोभाओं से बचने के लिये नमन किया गया है। अथर्व के दो मन्त्रों का एक सूक्त आया है किसका देवता तृष्टिका[26] है। सातवलेकर के अनुसार ये सूक्त विषमयी तृष्णा को सम्बोधित है।[27] उत्तम और श्रेष्ठ बनने की महत्वाकांक्षा – अहं भूयासमुत्तमः''[28] उत्साह की प्रशंसा और उसे बढ़ाने की प्रार्थना[29] दयाभाव की प्रशंसा आदि के पीदे निहितार्थ यही है कि इन उदाात्त भावनाओं का उद्भव और विकास चारित्रिक पूर्णता का पोषक है।

स्वप्न का स्वरूप एवं दुष्परिणाम– प्रसिद्ध मनोवैज्ञानिक सिगमंड फ्रायड(मनोविष्लेषक) ने स्वप्न और सुषुप्ति को मनोविश्लेषण सम्बन्धी गवेषणा का विषय माना है। फ्रायड के अनुसार स्पप्न नींद के समय का मस्तिष्क का जीवन है– यह सोने और जागने की बीच की अवस्था है। स्वप्न नींद खराब करने वाले उद्दीपनों की प्रक्रिया है। यह एक मानसिक घटना है। नींद का उद्देश्य विश्राम तथा स्वास्थ्य लाभ है। नींद की स्थिति में बाह्य संसार का भान न होना सबसे अच्छी और ठीक नींद है[30] ऋग्वेदीय प्रस्वादिनी उपनिषद्[31] तथा अथर्ववेदीय स्नापन सूक्त[32] में सभी अवस्था और वर्ग के लोगों के लिये मानसिक वृत्तियाँ शान्त करके प्रगाढ़ निद्रा का सुख प्राप्त करने की कामना की गयी है। कहा गया है कि निद्रा सभी अंगों और इन्द्रियों का निग्रह करके उनको शिथिल कर देती है – 'अंगान्य जग्रमं सर्वा' (अथर्व0 4/5/4)ऋ0 में स्वप्नों को मन का अधिदेव कहा गया है–

अपेहि मनसस्पते ऋ0 10164/1

स्वप्नावस्था को जागृतावस्था एवं निद्रावस्था से स्वरूपतः पृथक् कहा गया है– 'तुम न तो जीवित हो और न मरे हुए हो'[33] । स्वप्न के स्वरूप एवं दुष्परिणामों का चित्रण करते हुए मंत्र में कहा गया है कि स्वप्न 'यम का कारण' अर्थात् निद्रा अभावरूप होने से मृत्यु सा भयंकर एवं ग्राही का पुत्र अर्थात् गठिया आदि रोगों के कारण नींद न आने से उत्पन्न होने वाला है।[34]

निःसन्देह वैदिक मनोविज्ञान सामाजिक जीवन के पूर्ण उत्कर्ष के लिये दिशा–निर्देश करता है और साथ ही भारतीय मनोविज्ञान क आधारशिला प्रस्तुत करता है।

सन्दर्भसूची–

1. मनोविज्ञान–कौल तथा सिंह –दिल्ली– 1974 पृष्ठ 13।
2. वा0सं0– 34/2,34/3।
3. विष्वक् सत्यं कृणुहि चित्तमेषाम्। अथर्ववेद 3/1/4।
4. अथर्ववेद में मनोविज्ञान, शशि तिवारी पृ0– 236, 1981
5. अथर्ववेद 6/96/3।

© 2017 IJSRST | Volume 3, Issue 7, September-October-2017
Print ISSN: 2395-6011 | Online ISSN: 2395-602X | Page No 1397-1400

6. ऋ0 10/19/14।
7. कठोपनिषद् 1/3/4।
8. वही 1/3/9।
9. गीता 2/64।
10. कल्किपुराण अध्याय 8।
11. बुद्धिबुद्धिर्मतास्मि————गीता 7/1
12. या देवी सर्वभूतेषु बुद्धिरूपेण संस्थिता—मार्कण्डेय पुराण—दुर्गासप्तसती 5/20।
13. महद्ब्रह्मप्रकृतिः———शांकरभाष्य गीता 14/3।
14. मनोविज्ञान कौल और सिंह दिल्ली 1994,पृष्ठ 84,186,201।
15. कामस्तदग्रे समवर्तते मनसो रेतः प्रथमं यदासीत्। अथर्व0 19/52/1।
16. न वैवातश्चन काममाप्नोति । अथर्व0 9/2/24।
17. न वैकामानामतिरिक्तमस्ति— शत0ब्रा0 8/7/2/19।
18. अथर्व। 6/89
19. अथर्व0। 12/1
20. अथर्ववेदसंहिता—w.dwitney 5962 vol, pp 201-20
21. अग्निरिव मन्यो रिवषितः सहस्व— अथर्व0 4/31/2।
22. यथा देव न हृणीषे न हंसि— ऋ0 2/33/15।
23. अभयं वृधि— ऋ0 8/61/13, अभयं कुरु — यजु0 36/22।
24. मनोविज्ञान कौल और सिंह पृष्ठ 209—292।
25. अथर्व0।16/18।
26. अथर्व0। 6/113।
27. तृष्टासि तृष्टिका विषा— अथर्व0 7/113, अथर्ववेद का सुबोध भाष्य, सातवलेकर भाग तीन पृष्ठ 125।
28. अथर्व0। 6/15/1—3।
29. मन्युरिन्द्रो मन्युरेवास देवः। अथर्व0 4/32/2।
30. स्वप्नसिद्धान्त—चन्द्रबलीपाण्डेय —आजमगढ़ 1978 पृष्ठ 59।
31. तः सर्वाः स्वापमामसि— ऋ 7/55/8।
32. वयं निजनान्स्वापयामसि— अथर्व0 4/5।
33. यो न जीवोसि न मृतो देवानाममृतगर्भोऽसि स्वप्न— अथर्व0 6/46।
34. ग्राह्याः पुत्रोऽसि यमस्य करणः — अथर्व0 16/05/1।
यमस्य करणः। अम्रकोऽसि मृत्युरसि— अथर्व0 6/46/02।